RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-05
May-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

कला का बाज़ार : एक विवेचन

हिना यादव

शोध छात्रा (द्वितीय वर्ष) दृश्य कला विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

(Author's Correspondance: hinakyaduvanshi[at]gmail.com)

कला बाज़ार को लेकर आज इतनी ऊहापोह की स्थिति बनी हुई है कि कला 'बाज़ार' के आँगन में उतरी या फिर बाज़ार ख़ुद–ब–ख़ुद दाखिल हुआ कला के आँगन में। इसका वाजिब जवाब ढूढ़ना थोड़ा मुश्किल होगा। आज कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं जो बाज़ार की पहुंच से परे हो। कला के क्षेत्र में बाज़ार के पहले–पहल हस्तक्षेप को जानने के लिए, कला की अनवरत बहती धारा में डुबकी लगाना होगा। कला की परम्परागत तहो की तफ़्तीश करनी होगी। कुल मिलाकर काफी लम्बा सफर तय करना होगा। मगर ये तहों की तफ़्तीश, ये लम्बा सफर जरूरी भी है वर्तमान में कला की हितैषी बने 'बाज़ार' की वास्तविक मंशा जानने के लिए।

कला बाज़ार पर लिखने से पहले मैनें जितनी भी पुस्तके व पत्र–पत्रिकाएं पढ़ी, लेख पढ़े, कलाक्षेत्र से जुड़े अनुभवी लोगों के विचारों से रूबरू हुई, इन सबमें एक विचारणीय तथ्य जो मुझे खटकता रहा कि आखिर कला बाज़ार के पहलू (लाभ–हानि) में एक ही पल्ला हर बार भारी क्यों है। इन विषमताओं (नकारात्मक और सकारात्मक) से कला–जगत में जो प्रदूषण फैल रहा है क्या कला एवं कलाकार के अभ्युदय के लिए ऐसा वातावरण अनुकूल है। कला का बाज़ार से जो रिश्ता इन दिनो दिखाई पड़ रहा है क्या यह मुनासिब है।

यह प्रमाणित तथ्य है कि अंग्रेज व्यापार करने के उद्देश्य से भारत आए थे फिर फूट डालकर शासन किया। अंग्रेजी व्यवस्था से बने विद्यालयों की स्थापना की, जिसमें मद्रास स्कूल ऑफ आर्ट (1850), कलकत्ता स्कूल ऑफ आर्ट (1854), बम्बई स्कूल ऑफ आर्ट (1857), लहौर स्कूल ऑफ आर्ट (1875), में पाश्चात् कला शिक्षा के बीज बोए गए जिसका प्रयोजन धन उगाही था। अंग्रेज चित्रकारों की नियुक्तियाँ इसी उद्देश्य के साथ हुई ताकि भारतीय तकनीक, कथ्य, और पद्धति को योरोपीय देशों में ले जाया जा सके और वहाँ की प्रवृत्तियों को यहाँ प्रतिष्ठित कर भरपूर कमाई की जा सके। इसी कुटिल बुद्धि के तहत उन्होने भारतीय कला को पश्चिमी बाज़ार की 'वस्तु' में बदला। भारतीय कला जब पश्चिमी बाज़ार में पहुंची होगी निश्चय ही वह निस्तब्ध रही होगी, बिल्कुल मौन, फिर धीरे–धीरे वह पश्चिमी बाज़ार के मुआफ़िक ढली होगी। अब कला अकेले नही उसके साथ बाज़ार जुड़ गया जिससे आगे चलकर अनैतिक प्रवृत्तियों को जन्म हुआ, कला में चमत्कारप्रियता, चकाचौध, विवादास्पदता, मूर्तिभंजकता के साथ–साथ शुद्ध प्रतिबद्धताओं की छाया में संस्कृति विरोधी कृतियों की रचना होने लगी और उन पर विवाद करना प्रगतिशीलता तथा मूढ़ता का प्रमाण माना जाने लगा।[i] पश्चिमभिमुखता से कला में आधुनिकता का जो दौर आया उसने कला के पारम्परिक केन्द्रो को व्यावसायिक केन्द्रो में बदल दिया। बड़ी संख्या में कला दीर्घाएं खुलने लगी। कलाओं के संरक्षण के नाम पर साजिश रची गयी। कला और कलाकार के शुभचिंतक बने ढ़ोगियों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुयी। ये वही सौदेबाज लोग है जो मोटी रकम लेकर प्रर्दशनियाँ लगवाते है, कमीशन खाते है और शुर्खिया बटोरने के लिए कलाकारों की कृतियों को पुरस्कृत करवाते है। मीडिया भी यहाँ कम रायता नही फैला रहा है वह सिर्फ कीमतों के बारे में बात करता है और अपनी आधी–अधूरी जानकारी में नमक मिर्च लगा के करोड़ो लोगों को परोस देता है। बड़ी चतुराई से ये कला का व्यावसाय करते हैं।

वर्ष 2014 की बात है मेरे ही एक सहपाठी ने मुझे दिल्ली में प्रर्दशनी लगाने के लिए बताया जोकि दिल्ली की किसी संथा द्वारा आयोजित की जा रही थी मेरे अलावा मेरी दो मित्र भी प्रर्दशनी हेतु अपनी कृति भेज रही थी हम तीन के अलावा उसे दो लोग और चाहिए थे तभी प्रर्दशनी हेतु कृति भेजी जा सकती थी। बात मेरे समझ से परे थी कि दो लोग और क्यों चाहिए। खैर प्रर्दशनी हो गयी, जीवनवृत्त (बायोडाटा) में एक पक्ति और बढ़ गयी।

अनीश कपूर की कलाकृति

हाँ आज के दौर में जितनी ज्यादा आपके जीवनवृत्त (बायोडाटा) में प्रर्दशनियों की संख्या होगी उतने अच्छे

RRIJM 2015, All Rights Reserved

कलाकार की श्रेणी में आपको रखा जायेगा। कुछ ही माह बाद उसी सहपाठी ने मुझे पाँच और कलाकारों को प्रर्दशनी हेतु राजी करने को कहा। फिर उसने मुझे बताया कि अगर पाँच और कलाकार प्रर्दशनी हेतु तैयार हो जाते हैं तो तुम्हारा पैसा (प्रर्दशनी हेतु ली गयी राशि) नही लगेगा। उसकी बातें सुनने के बाद मेरे मस्तिष्क में तुरन्त पिछला वाक़या तैरने लगा। अन्ततः उसने खुद ही साफ किया कि पिछली बार उससे भी प्रर्दशनी हेतु राशि नही ली गयी थी। बाज़ार के चलते वर्तमान में ऐसे न जाने कितने कुकृत्य हो रहे हैं।

वर्तमान युग बाज़ार और उससे उपजी सांस्कृतिक–सामाजिक परिवर्तनों व चिन्ताओं का है। कला–जगत में आज आन्तरिक तर्क–वितर्क कला–बाज़ार को लेकर है। ज्यादातर कलाकार बाज़ार और कला के इस रिश्ते से खुश है और यें वही है जिन्हे बाज़ारी दांव–पेंच बखूबी आता है। बुरा तो उनके साथ हुआ है जिन्हे बाज़ार की समझ नहीं। सूर्यनाथ सिंह द्वारा लिए गये साक्षात्कार में कलाकार जतीन दास जी ने बाज़ार से कला को हो रही क्षति पर गहरी चिंता व्यक्त की है कि ''कला को जब से कुछ व्यावसायिकों ने व्यापार से जोड़ दिया है तब से धन की अपार संम्भावनाएँ दिखाई देने लगी हैं। इसी दृष्टि से काफी अनाड़ी लोगों ने भी कला को अपना क्षेत्र बना लिया है और उनको कला का ए.बी.सी.डी. भी नहीं मालूम और कला दीर्घाओं वाले कई बड़े व्यापारियों ने अपने स्वार्थ की दृष्टि से इनको यंग मास्टर्स कहकर प्रोमोट करना शुरू कर दिया है। नयें कलाकारों में एक अजीब तरह की प्रतिष्ठा की जल्दी दिखायी दे रही है। इससे कला का नुकसान हो रहा है।''[ii]

आज परिवर्तित समाज व्यावसाय के अधिक करीब है चूँकि कलाकार भी इसी समाज का अंग है वह समाज में हो रहे परिवर्तनों के प्रति सजग है। वह अपने लैपटॉप, सेलफोन, गैजेट्स को अपडेट करने के साथ–साथ खुद को भी अपडेट रख रहा है क्योंकि वह इस बात से अभिज्ञ है कि परिवर्तन के इस दौर में समय के साथ चलने में ही भलाई है। समाज में अन्य लोगों की तरह कलाकार की भी अपनी इच्छा व अकाँक्षा होती है। वे भी मनुष्य हैं और जीवन में प्रेम और समृद्धि की चाह उन्हें भी होती है। कलाकार भी सम्पन्न बनना चाहता है उसी के लिए कभी–कभी अपनी कला के साथ समझौता कर अर्थ प्राप्त करना चाहता है। इसमें कोई दोष नही है क्योकि उसका भी अपना जीवन है जो संघर्षो से भरा है दोष तब है कि वह किस हद तक अर्थोपार्जन करने के लिए सक्रिय होता है। उसके साथ–साथ शुद्ध सृजन करता है तो ठीक है। बहुत सारे कलाकार ऐसे भी है जो कला को केवल अर्थोपार्जन का माध्यम मानते हैं। इससे कलाकार की सृजन क्षमता एक सीमारेखा में बँधकर रह जाती है। वह उसी साँचे में ढ़लकर रह जाता है।[iii] कलाकार मंजीत बावा का मानना है कि ''भूखे रहकर आप कला की बात नही कर सकते। कलाकार को भी अच्छी जिन्दगी जीने का हक है।'' मगर बाज़ारवाद के लोभ–लाभ के कारण सक्रिय कलाकारों द्वारा बनायी गयी कृतियों को वह कृति नही बल्कि उत्पादित वस्तु मानते हैं।

बीसवीं सदी के दो–चार वर्षों पूर्व से आरम्भ हुए अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ारवाद ने भारत को जिन बेड़ियों में जकड़ लिया है उससे न जाने कितनी विषमताएं पैदा हुयीं हैं। कला की जातीय चेतना खतरे में है, 'कला' कला की न होकर एक वर्ग विशेष की हो गयी जो उसके सर्वेसर्वा बने बैठे हैं ये कला की उत्कृष्ठता बहुत से स्तरों पर अपने से तय करने लगे हैं जिस कलाकार को चाहे वह सातवें आसमान पर बैठा दें और जिसे चाहे नीचे उतार दें।

अतुल डोडिया की कलाकृति

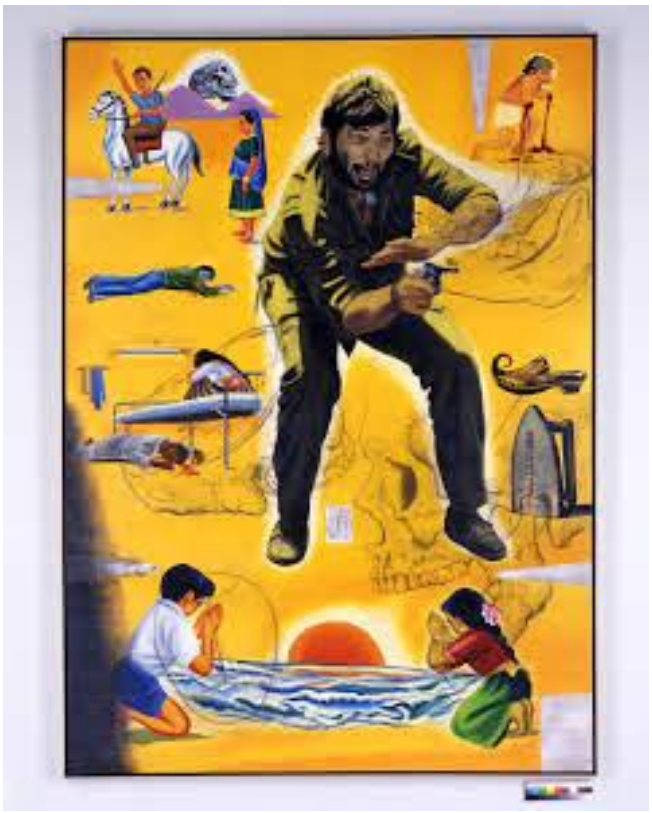

कला गौण कलाकार प्रमुख हो गया, यानि बाज़ार कलाकृति को उसकी गुणवत्ता के लिहाज से नही बल्कि ब्राण्ड के नाम से पहचाना जाने लगा है। अब बात कलाकृतियों की नही महगें दामों में बिकते कलाकारों की हो रही। नाम बिक रहा, जो एक पापुलर ब्राण्ड है। बढ़ते दाम व उछलती कीमते कलाकृतियों के मानक तय करने लगी, जिस कलाकार की कृति सबसे ऊँचे दाम में बिकी वो ही सर्वश्रेष्ठ कृति है बकायदा आकड़ों से इसकी गवाही दी जा रही है।

एक अंग्रेजी पत्रिका के अनुसार हुसेन, रज़ा, और सूजा की कलाकृतियों की बजाय सर्वाधिक मूल्य वाले पाँच कलाकारों में अनीश कपूर, पहले स्थान पर हैं बाकी के चार स्थानों पर सुबोध गुप्ता, अतुल डोडिया, टीवी सन्तोष और रकीब शॉ हो गए हैं। ये सारे कलाकार समकालीन कला के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं और कला में बेहद महत्वपूर्ण सर्जन कर

RRIJM 2015, All Rights Reserved

रहे हैं परन्तु गौर करें, इनकी कलाकृतियों का मूल्य बाज़ार तय कर रहा है। कौन आगे है, कौन पीछे इसका निर्णायक व नियामक बाज़ार है।[iv] इससे किसी को कोई भी आपत्ति नही है और होनी भी नहीं चाहिए परन्तु इसमें कला की निजता कहाँ रहेगी। क्या वास्तव में बढ़ते मूल्य ही मानक है कि अमुक कलाकार ही सर्वश्रेष्ठ है। क्या बाज़ार का कला को निर्धारित करना कोई आम बात है शायद हम इस बात से अनजान है कि बाज़ार की माँग पर किया गया काम कला को ही मिटा डालना है। इक्कीसवीं शताब्दी का भारत बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के बाज़ार का भारत है। भारत को अपनी सांस्कृतिक सम्पदा और क्रांतिकारी सृजनात्मक विरासत पर गर्व नही रह गया, उसे स्वयं को विश्व का सबसे बड़ा बाज़ार होने पर गर्व है। सर्वग्रासी बाज़ारतन्त्र के समानान्तर जो उत्तर आधुनिकता की आँधी चल पड़ी है; उसने भी बौद्धिक स्तर पर बाज़ार के निहित उद्देश्यों की ही पूर्ति की है। औपनिवेशिक दासता के प्रति प्रतिबद्ध भारतीय समाजों ने पश्चिम से आए हर तरह के बौद्धिक विमर्शों को बिना नीर–क्षीर विवेक के आत्मसात किया है और अपने को अकारण ही पश्चिम की अमानवीय विचारधाराओं का दास बनने दिया है।[v]

सुबोध गुप्ता की कलाकृति

बाज़ारोन्मुख कला में आज नया व अनोखा सृजित करने की जैसे होड़ लगी है। प्रयोग के नाम पर खिलवाड़ की प्रवृत्ति भी जोर पकड़ रही है। कैनवास की दुनियॉ उदास है, इन्स्टालेशन, परफार्मेन्स, मिक्स मीडिया जैसे माध्यमों में हर तरफ शोर है। कलाकार अपनी निजी–स्वतन्त्रता के मुआफ़िक माध्यमों को चुनकर बाज़ार के मुहाने तक ले जाता है बिल्कुल वैसा सजा कर जैसा बाज़ार ने माँग की थी। आज वह कलाकार से ज्यादा व्यावसायी की भूमिका अदा कर रहा है। उसे भी ज्ञात है कि जब तक उसकी कृति बाज़ार में दिखेगी नही तब तक बिकेगी नही। इतना ही नही वह आए दिन होने वाली प्रदर्शनियों में अपनी सहभागिता इसी के चलते दर्ज कराता है दूसरा उसे अपनी श्रेष्ठता का पुख़्ता सबूत प्रमाण–पत्र (सर्टिफ़िकेट) जो बटोरना होता है। माँफ कीजिएगा! मै इसलिए ऐसा कह रही क्योंकि आज सिर्फ कला के श्रेत्र में ही नही बल्कि सभी श्रेत्रों में हमारी गुणवत्ता इसी से तो परखी जाती है। ख़ैर मुद्दे पर आते हैं। बाज़ार की कूटनीतिक चाल ने आज ऐसा वातावरण तैयार कर दिया है कि गुरू–शिष्य परम्परावादी कला गायब होती दिख रही है। नये पीढ़ी के कलाकारों को वरिष्ठ व बुजुर्ग कलाकारों के पास बैठने तक का समय नही, उन्हे ऐसा लगता है कि वे परम्परावादी नही, प्रयोगवादी है उन्हे मार्गदर्शक की आवश्यकता नही है।

जबसे कला में बाज़ार हावी हुआ है एक अलग किस्म की प्रतिद्वंद्विता दिख रही है। जिन कलाकारों की कृतियों की बाज़ार में पूछ है उन्होने कला–बाज़ार की नब्ज़ पकड़ ली है। जिस ढ़ग का उनका चित्र बिक रहा, वह उसी ढ़ग के दर्जनों चित्र बनायें पड़े है इससे पुनरावृत्ति (Repetition) का प्रचलन बढा। शायद यही वजह रही कि रज़ा के बिन्दु से हमारी बार–बार मुलाक़ात होती है। आज हुसेन के घोडों की गिनती करना मुश्किल है। पुनरावृत्ति जहाँ होती है वहाँ बाज़ार होता है। बाज़ार की खुराक पूरा करने के चक्कर में असल के साथ नकल की प्रवृत्ति भी जोर पकड़ी। नकली कृतियाँ धड़ल्ले से बिकने लगी। कभी यह कहा जाता था कि कलायें मानव को शिक्षित, सुसंस्कृत बनाकर संस्कार प्रदान करती है परन्तु, मूल्यों का तेजी से विघटन होने लगा है। कानून–कायदों, मर्यादाओं को ताक पर रखकर कला का एक मात्र उद्देश्य धन कमाना ही जैसे होता जा रहा है। यही कारण है कि नकल की प्रवृत्ति इधर तेजी से बढ़ी है। कला के इस गोरखधंधे के प्रति कलाकार भी अवाज नही उठाता शायद वजह ये भी हो कि कौन कानूनी दाँव पेचों के झमेले में पड़े। जो चल रहा है, उसे चलने दें, आखिर कला बाज़ार में भले उनकी कलाकृतियों की नकल ही बिके, नाम तो उनका ही हो रहा है। कुछेक मसलों में अपवाद भी होते रहे हैं। मसलन अंजली इला मेनन ने फेक आर्ट के मसले में अपने सहायक को जेल की हवा खिला दी थी।[vi]

अभी हॉल ही में मैने किसी कारणवश एक प्रसिद्ध कलाकार का नाम गूगल पर सर्च किया, कुछ एक सेकेण्ड बाद ही विकीपीडिया पर पूरा ब्योरा आ गया। मैने ज़रूरत के हिसाब से जो जानकारी चाहिए थी बटोरी और उत्सुकतावश लैपटाप के प्रसंकेतक (कर्सर) द्वारा बाहरी कड़ियों को देखने लगी जिसमें कलाकार का प्रारंभिक जीवन, शिक्षा, छात्रवृत्ति, पुरस्कार व एकल प्रदर्शनियों के साथ–साथ कला–बाज़ार का एक कॉलम भी कलाकार की गुणवत्ता बयां कर रहा था। सचमुच आज कला–बाज़ार बहुत मायनों में कलाकार का व्यक्तित्व भी तय कर रही है या यूं कहे कि बाज़ार कला व कलाकार दोनों का समूचा व्यक्तित्व निर्धारित कर रही है। कला की ज़ात (अस्तित्व) अब बाज़ार के हाथ में है। कला की बागडोर अब बाज़ार ही सम्भाल रही है। अभी भी समय है हम

RRIJM 2015, All Rights Reserved

अपनी संस्कृति, परम्परा और समृद्ध इतिहास से आगे जाते हुए बाज़ार को रोक कर सृजन को सृजन का जामा ही पहनाएं। उसे उद्योग व वस्तुमात्र का लबादा न ओढ़ायें। कलाकारों को माँग और पूर्ति के सिद्धान्त से उपर उठकर सृजन करना होगा। बाज़ार का प्रतिरोध शुद्ध सृजन से ही सम्भव है। एक कलाकार होने के नाते ये हमारा फर्ज बनता है कि कला की जातीय शुद्धता की रक्षा करें। कलाकार अपनी कला को बाज़ार के मिज़ाज से न बदले बल्कि बाज़ार उनकी कला को देखकर अपना मिज़ाज बदले ऐसा वातावरण निर्मित करें। कला की बेहतरी के लिए कला–बाज़ार पर वाज़िब बहसे हों तभी कला का जीवन्त प्रवाह बना रहेगा।

आज की तारीख में दिल्ली देश की सबसे बड़ी कला मण्डी के रूप में जानी जाती है। पहले कुछेक गिनी चुनी गैलरियां होती थीं परन्तु आज गैलरियां भी मधुमक्खी के छत्तों की भाँति दिन–ब–दिन बढ़ती जा रहीं है। कलाकार ज्योति भट्ट की यह राय बहुत मौजूँ है कि ''वे कला–दीर्घाओं के विरूद्व नहीं है और न ही उनकी व्यवस्था से उन्हें कोई ऐतराज है, पर कला का वास्तविक परिप्रेक्ष्य व्यक्ति का जीवन संघर्ष है न कि सिर्फ प्रदर्शन।'' यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि आज कला–दीर्घाओं, प्राइवेट गैलरियों के निर्देशक व संचालक भी बढ़ती व्यवसायिकता के चलते ही कला के जरिए अपनी किश्मत चमकाने में लगे हैं। उनके लिए न कलाकृति महत्वपूर्ण है न ही कलाकार बस महत्वपूर्ण है तो इनकी बदौलत आने वाली लक्ष्मी। बढ़ती व्यवसायिकता से कला में सिर्फ प्रदर्शनधर्मिता बढ़ रही है फिर वो चाहे नवयुवाँ कलाकार हो या वरिष्ठ कलाकार, सब तेजी से ऐसी गतिविधियों में शामिल हो रहे है जिससे उनको तात्कालिक लाभ तो मिल रहा, पर कलायें अपना स्वरूप खोती जा रही हैं। कला की भाषा का बाज़ार से सरोकार होने की वजह से आम–जन से सरोकार नाममात्र का रह गया है। आवश्यक यह है कि कला–दीर्घाएँ बाज़ार से प्रभावित न होते हुये कला एवं कलाकार को नई ऊंचाईयाँ दें और उनके लिए नवीन दिशा का मार्ग प्रशस्त करें।

सन्दर्भ

[i] ड़ॉ. ज्योतिष जोशी, समकालीन कला अंकः 22, जून–सितम्बर 2002, ललित कला अकादमी, रवीन्द्र भवन,35 फ़ीरोज़शाह मार्ग, नई दिल्ली–110001, पेज नम्बर–5,6

[ii] उमेश वर्मा एवं ड़ॉ. ज्योतिष जोशी, समकालीन कला अंकः 18, नवम्बर 2000,ललित कला अकादमी, रवीन्द्र भवन, नई दिल्ली–110001, नई दिल्ली–110001, पेज नम्बर–50

[iii] ड़ॉ. ज्योतिष जोशी, समकालीन कला अंकः 22, 2002, ललित कला अकादमी, रवीन्द्र भवन,35 फ़ीरोज़शाह मार्ग, नई दिल्ली–110001, पेज नम्बर–22

[iv] ड़ॉ. ज्योतिष जोशी, समकालीन कला अंकः 40–41,मार्च–जून 2010, ललित कला अकादमी, रवीन्द्र भवन,35 फ़ीरोज़शाह मार्ग, नई दिल्ली–110001, पेज नम्बर–5,6

[v] ड़ॉ. ज्योतिष जोशी, समकालीन कला अंकः 19, 2010, ललित कला अकादमी, रवीन्द्र भवन, नई दिल्ली–110001, पेज नम्बर–5

[vi] ड़ॉ. अवधेश मिश्रा, कला दीर्घा, अंकः 30, अप्रैल 2015, 1/9, विनीत खांड, गोमती नगर, लखनऊ पेज नम्बर– 6,9

[7] ड़ॉ. अवधेश मिश्रा, कला दीर्घा, अंकः 29, 2014, 1/9, विनीत खांड, गोमती नगर, लखनऊ

[8] धनंजय चोपड़ा,कला त्रैमासिक, प्रकाशक– ड़ॉ. वीना विद्यार्थी, सचिव,राज्य ललित कला अकादमी,उ.प्र., मुद्रकः शिवम आर्ट्स 211 पांचवी गली निशातगंज, लखनऊ

[9] ड़ॉ. अवधेश मिश्रा, कला दीर्घा, अंकः 25, अक्टूबर 2012, 1/9, विनीत खांड, गोमती नगर, लखनऊ पेज नम्बर– 47,48

[10] ड़ॉ ज्योतिष जोशी, रूपंकर समकालीन कला विमर्श, प्रकाशकः यश पब्लिकेशन्स X/909,चाँद मोहल्ला गाँधी नगर दिल्ली –31प्रथम संस्करण : सितम्बर 2006, पेज नम्बर –87

[11] प्राण नाथ मागो, भारत की समकालीन कला,एक परिप्रेक्ष्य, नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया,नेहरु भवन,5 इन्स्टीट्यूशनल एरिया,फेज–II,बसन्त कुन्ज, नई दिल्ली, दूसरी संस्करणः 2011